कौन आज़ाद हुआ...

● अली सरदार जाफरी

कौन आज़ाद हुआ
किसके माथे से सियाही छूटी
मेरे सीने में दर्द है महकूमी का
मादरे हिन्द के चेहरे पे उदासी है वही
कौन आज़ाद हुआ...

खंजर आज़ाद है सीने में उतरने के लिए
मौत आज़ाद है लाशों पे गुज़रने के लिए
कौन आज़ाद हुआ...

काले बाज़ार में बदशक्ल चुड़ैलों की तरह
कीमतें काली दुकानों पे खड़ी रहती हैं
हर खरीदार की जेबों को कतरने के लिए
कौन आज़ाद हुआ...

कारखानों में लगा रहता है
सांस लेती हुई लाशों का हुजूम
बीच में उनके फिरा करती है बेकारी भी
अपने खूंख़्वार दहन खोले हुए
कौन आज़ाद हुआ...

रोटियां चकलों की कहवाएं हैं
जिनको सरमाए के दल्लालों ने
नफ़ाखोरी के झरोखों में सजा रक्खा है
बालियां धान की गेहूं के सुनहरे गोशे
मिस्रो-यूनान के मजबूर गुलामों की तरह
अजनबी देश के बाज़ारों में बिक जाते हैं
और बदबख़्त किसानों की तड़पती हुई रूह
अपने अफ़लास में मुंह ढांप के सो जाती है
कौन आज़ाद हुआ...

देश के ज़ालिम हुक्मरानों और उनके लग्गू-भग्गुओं ने नई सदी के पहले स्वतंत्रता दिवस का जश्न हर बार से भी ज्यादा ताम-झाम से मनाया। झूठ की सड़ांध मारते भाषण हुए, तिरंगा शरीर पर लपेटकर फैशन परेडें हुईं, दारू पार्टियां हुईं...

15 अगस्त 1947 की जिस आज़ादी को फैज़ ने 'दाग़-दाग़ उजाला' कहा था, वह आधी सदी बीतते-बीतते भादो की अमावस की काली रात में तब्दील हो चुकी है। देश जल रहा है। ज़ालिम नीरो की जारज औलादें बांसुरी बजा रही हैं।

इस मौके पर हम अली सरदार जाफरी को श्रद्धांजलि देते हुए उनकी यह नज़्म 'आह्वान' में फिर से प्रकाशित कर रहे हैं जो उन्होने 1948 में लिखी थी पर जिसका एक-एक लफ़्ज़ जैसे आज की ही बात करता है।

—संपादक